



VAAQDHARA



VAAQDHARA

अगस्त 2026

वाग्धारा नी



प्यारे स्वराजी भाइयों—बहनों, प्यारे बच्चों, जय गुरु, जय स्वराज !!

चूँकि अगस्त माह बहुत ही महत्वपूर्ण होता है हमारे लिए , करीब करीब इस माह में हमारा सबसे बड़ा त्यौहार **“दिवासा”** जो आदिवासी अंचल का सबसे बड़ा त्यौहार वर्षों से माना जाता था। **हरियाली अमावरस्या** इसी को कहते हैं उसकी भी **अग्रिम शुभकामनाएं और विश्व आदिवासी दिवस की अग्रिम शुभकामनाएं** और हमारे लिए इस मौसम के दौरान इन त्यौहार का आना हमें हमेशा यह आभास दिलाता है की यह हमें हमारी मूल जड़ों से किस प्रकार से जोड़ने के लिए महत्वपूर्ण है। किस प्रकार से हम प्रकृति के इस त्यौहार के साथ इसकी जो रक्षा करते हैं उस समाज के दूसरे अंगों को दूसरे घटकों को किस प्रकार से हम जोड़ पाए। प्रकृति के सारे घटकों को कैसे जोड़ पाए वह हमारे लिए महत्वपूर्ण है।

चूँकि जब आपसे इस अखबार के माध्यम से चर्चा का मौका आता है तो मैं हर अंक में एक विषय जरूर आपसे साझा करता हूं और वह विषय है की हम किस प्रकार से हमारी परंपरागत चीजों को सहज रहे हैं।

परंपरागत तरीकों को, विचारों को, वस्तुओं को सहज कर रख सकते हैं और आगे वाली पीढ़ियों तक पहुंचा सकते हैं , विचारों को सहजने के लिए हमें विशेष रूप से बात करनी होगी हमारे उम्र—दराज अनुभवी पारिवारिक सदस्यों से, समाज के सदस्यों से चाहे वह चर्चा हो मौसम की, भोजन की, कृषि की, सीखने सिखाने की, या हमारे समस्याओं के समाधान की इसी प्रकार से अगर हम बात करे परंपरागत वस्तुओं में हमारे कृषि उपकरणों , हमारे घर के बर्तन हो, चाहे हमारे आभूषणों हो, हमारे दिन प्रतिदिन काम में आने वाली वस्तुएं हो, दिन प्रतिदिन बाजार के बढ़ते प्रभाव के कारण उन्हें हम गैर उपयोगी मान करके दूर कर देते हैं या हटा देते हैं तो इस प्रकार से हम उसे सहज कर पुनः हमारी पीढ़ियों के लिए और उसमें अगर हमें आवश्यक नई तकनीक की समावेश कि तो वस्तु के साथ कैसे समावेश कर सकते हैं।

इसी प्रकार से आभूषण, और तो और हमारे बीज और वनस्पतियां जो कि इस माह के लिए बहुत महत्वपूर्ण है अगर हम हमारे जीवन की एक वर्षा ऋतु को संभाल के नहीं रखेंगे तो हम उससे कई नस्लों को प्रभावित करते हैं इसलिए हमारे लिए आवश्यक है कि हम किस प्रकार से बरसात ऋतु में हमारे बीजों को फिर से आने वाली पीढ़ियों के लिए उत्पादन मिलना है।

चूँकि प्रतिवर्ष सावन मास कि इस चर्चा में आपसे आग्रह करता हूं कि हम अपने आप उगने वाली वनस्पतियां जो कि हमारे भोजन का हिस्सा थी उसे हम किस प्रकार से खोज करके लाते हैं और तो और

हमारे इलाज के लिए काम में आने वाली वनस्पतियों को हमारे गांव के बुजुर्गों से, समाज के बुजुर्गों से पूछ करके उसे लिपिबद्ध करें और संभाल करके रखें यह हमारे लिए बहुत महत्वपूर्ण है। चूँकि अफ्रीका में प्रतिमाह एक वनस्पति की चर्चा की जाती है परंतु वह दिन—प्रतिदिन मिलने वाली है हमें प्रसन्नता होगी अगर हम ऐसी वनस्पति को भी खोज करके लाएं जो आसानी से उपलब्ध नहीं होती हो तो यह आसानी से उपलब्ध और हमारे नई पीढ़िया उससे अनजान हो तो हमें उसे संभाल करके रखना होगा और आगे बढ़ना होगा।

चूँकि जब चर्चा अंत की ओर जा रही होती है तो मै प्रति माह एक आग्रह आपसे जरूर करता हूँ की हम क्यों न आने वाली पीढ़ियों के लिए इन चर्चाओं को अधिक से अधिक पहुंचाएं इन बातें पत्रिकाओं को हम कितना पहुंचा पाते है वह हमारे महत्वपूर्ण है। अगर यह पत्रिका के माध्यम से आप संदेश को और अपने कार्यों को और मजबूत कर पाए तो इस पत्रिका का प्रकाशन सफल होगा। इस पत्रिका को आप तक पहुंचना सफल होगा अन्यथा व्यर्थ है। मै प्रत्येक स्वराजी सदस्य, संगठन के पदाधिकारी, वाग्धारा के कार्यकर्ताओं से आग्रह करना चाहता हूं कि हम इन संदेशों को और हम हमारे पाठकों से, हमारे पढ़ने वाले लोगों से, हमारे गांवो से इसके बारे में ज्यादा से ज्यादा जानकारी संग्रहित करके ला सकते हैं तो हमें नाम से छापने में खुशी होगी। चाहे वो जानकारी वनस्पतियों की हो, चाहे हमारे आभूषणों की, वस्तुओं की, विषय की हो, हमारे रिवाजों की हो।

इसी के साथ आपको हमारी खरीफ फसल की बहुत सारी शुभकामनाएं, वर्षा ऋतु हम पर और प्रकृति में कृपा बनाकर रखे और हमारी फसले बहुत उपजें निपजें।

जय स्वराज।

आपका अपना

जयेश जोशी



अगस्त 2026

वाग्धारा नी

खेत की बात/फसल विधि

अगस्त का महीना आते ही हमारे गाँव—गाँव में एक विशेष हलचल महसूस होने लगती है। खेतों में हरियाली अपने पूरे यौवन पर होती है, धान की रोपाई से लेकर निराई—गुड़ाई तक हर तरफ हलचल रहती है, और ठीक इसी समय घर—आँगन में राखी के धागे बंधने की तैयारियाँ भी शुरू हो जाती हैं। यह संयोग नहीं, बल्कि हमारी सामुदायिक जीवन—शैली की वह गहरी बुनावट है जहाँ रिश्तों की डोर और धरती की सेवा एक ही जीवन—लय में गुँथी हुई है। **“साझे हाथ, साझी फसल”** इसी भावना का प्रतिनिधित्व करती है, जहाँ श्रम भी साझा है और र्नेह भी।

घर और खेत, दोहरी जिम्मेदारी, अटूट धैर्य — हमारे समुदायों की महिला किसान इस मौसम की असली धुरी हैं। भोर होते ही वे घर के काम निपटाती हैं, बच्चों को स्कूल भेजती हैं, पशुओं की देखभाल करती हैं—और फिर टोकरी सिर पर उठाकर खेत की ओर निकल पड़ती हैं। दोपहर तक रोपाई, निराई और सिंचाई का श्रमसाध्य काम चलता है, और शाम ढलते ही फिर चूल्हा — चौका और परिवार की जिम्मेदारी उनका इंतजार करती है। यह दोहरा परिश्रम किसी एक दिन की बात नहीं, बल्कि पूरे खरीफ मौसम की जीवंत सच्चाई है।

फिर भी, यह बोझ महिलाएँ अकेले नहीं ढोतीं। पीढ़ियों से चली आ रही **“साझी मेहनत”** की परंपरा आज भी हमारे गाँवों की आत्मा है। जब एक परिवार की रोपाई का समय आता है, पड़ोस की महिलाएँ स्वयं उसके खेत में पहुँच जाती हैं, बिना बुलाए, बिना किसी शर्त के। बदले में जब दूसरे परिवार की बारी आती है, वही सहयोग लौटाया जाता है। न कोई मजदूरी का लेन—देन, न कोई **हिसाब—किताब** बस एक अटूट विश्वास के **“आज मैं तेरे साथ, कल तू मेरे साथ।”** यही विश्वास हमारी सामाजिक पूँजी है, जो किसी बैंक—बैलेंस से कहीं अधिक मूल्यवान है।

‘साझी फसल’ केवल एक साथ काम करने की बात नहीं है— यह साझा ज्ञान, साझा जोखिम और साझा उल्लास का प्रतीक है। जब बारिश देर से आती है, कीट का प्रकोप बढ़ता है, या संसाधनों की उपलब्धता कम हो जाती है, तो पूरा समुदाय मिलकर समाधान खोजता है। बुजुर्ग महिलाएँ पारंपरिक बीज—संरक्षण की विधियाँ नई पीढ़ी को सिखाती हैं, और युवा महिलाएँ परम्परागत कृषि तकनीकों को समुदाय में लेकर आती हैं। यह ज्ञान का सतत आदान—प्रदान ही हमारी खाद्य सुरक्षा, आत्मनिर्भरता, सांस्कृतिक निरंतरता और स्वराज की असली नींव है।

गाँवों में यह स्पष्ट रूप से देखा गया है कि जहाँ महिलाएँ समूह बनाकर खेती करती हैं, वहाँ उत्पादन बेहतर होता है और साथ ही मानसिक तनाव भी काफी कम होता है। सामूहिक श्रम से अकेलापन दूर होता है, अनुभव आपस में बँटते हैं, और



हमारी थाली, हमारा स्वास्थ्य — स्थानीय भोजन, मौसमी देखभाल और परंपरागत ज्ञान से स्वस्थ परिवार की ओर स्वस्थ जीवन की शुरुआत हमारी थाली से होती है। भोजन केवल पेट भरने का साधन नहीं है, बल्कि यह शरीर को ऊर्जा, विकास, रोगों से लड़ने की क्षमता और सक्रिय जीवन जीने की शक्ति प्रदान करता है। फिर भी आज बदलती जीवनशैली, बाजार में मिलने वाले अत्यधिक प्रसंस्कृत (पैकेट वाले) खाद्य पदार्थों की बढ़ती खपत और स्थानीय पारंपरिक भोजन से दूरी के कारण बच्चों में कुपोषण, महिलाओं में खून की कमी (एनीमिया) तथा अन्य स्वास्थ्य समस्याएँ बढ़ रही हैं।

हमारे गाँवों में पहले भोजन प्रकृति और मौसम के अनुसार तैयार होता था। खेतों में उगने वाले बाजरा, मक्का, ज्वार, कोदो, कुटकी, दालें, हरी पत्तेदार सब्जियाँ और जंगल से मिलने वाले मौसमी फल परिवार की थाली का हिस्सा होते थे। यही भोजन शरीर को आवश्यक पोषण देता था। आज आवश्यकता है कि हम अपनी थाली में फिर से इन स्थानीय खाद्य पदार्थों को सम्मानजनक स्थान दें।

क्या आप जानते हैं?

❖ जीवन के पहले 1,000 दिन (गर्भधारण से लेकर बच्चे के 2 वर्ष की आयु तक) बच्चे के शारीरिक और मानसिक विकास के लिए सबसे महत्वपूर्ण होते हैं।

❖ महिलाओं और किशोरियों में एनीमिया (खून की कमी) एक गंभीर स्वास्थ्य समस्या है, जिसे संतुलित भोजन और आयरन युक्त आहार से काफी हद तक रोका जा सकता है।

❖ स्थानीय और मौसमी खाद्य पदार्थ ताजे, कियायती और पोषण से भरपूर होते हैं।

संतुलित आहार क्यों आवश्यक है?

हमारा शरीर अलग—अलग प्रकार के पोषक तत्वों से मिलकर स्वस्थ रहता है। इसलिए भोजन में केवल अनाज ही नहीं, बल्कि दालें, सब्जियाँ, फल, दूध या अन्य उपलब्ध प्रोटीन युक्त खाद्य पदार्थ और थोड़ी मात्रा में स्वस्थ वसा भी शामिल होना चाहिए।

एक संतुलित थाली में मोटे अनाज, दाल, हरी पत्तेदार सब्जियाँ, मौसमी फल और तिल, मूंगफली या अलसी जैसे स्थानीय बीज शामिल हों तो शरीर को अधिकांश आवश्यक पोषक तत्व प्राप्त हो सकते हैं।

बच्चों का पोषण— स्वस्थ भविष्य की नींव बच्चों के जीवन के लिए सबसे सुरक्षित और संपूर्ण आहार है। छह महीने तक केवल माँ का दूध और उसके बाद माँ के दूध के साथ घर का ताजा एवं पौष्टिक पूरक आहार देना आवश्यक है।

दाल—चावल की खिचड़ी, दलिया, अंकुरित अनाज, मसली हुई सब्जियाँ, मौसमी फल और दालें बच्चों के लिए पौष्टिक विकल्प हैं। पैकेट वाले खाद्य पदार्थों और मीठे पेय पदार्थों की तुलना में घर का ताजा भोजन

हमारी स्थानीय पोषण थाली	
खाद्य समूह	स्थानीय विकल्प
अनाज	बाजरा, मक्का, ज्वार, कोदो, कुटकी, गेहूँ, चावल
प्रोटीन	घन, मूंग, राइस, मसूर, भाजन, राजमा, लेंस, मूंग
हरी सब्जियाँ	सहजन की पत्तियाँ, पालक, पत्तागोश, मीठा, खरबूज
फल	अमरुद, फांसी, केला, अमर, आम, सेब, खजूर
ऊर्जा एवं कैल्शियम	तिल, मूंगफली, अलसी, राई
कम नमक-कमै तैयार किया गया, ताजा और स्वस्थ भोजन	

आत्मविश्वास कई गुना बढ़ जाता है। जिस काम को एक महिला अकेले करने में एक पूरा हफ्ता लगा देती, वही काम पाँच—सात महिलाएँ मिलकर एक ही दिन में पूरा कर लेती हैं, और साथ में हँसी—मजाक, लोकगीत और आपसी सहारा भी मुफ्त में मिल जाता है। यह दृश्य किसी भी कृषि—रिपोर्ट के आँकड़ों से कहीं अधिक जीवंत और प्रेरणादायक है।

रक्षाबंधन — रिश्तों की रक्षा, धरती की रक्षा — इसी अगस्त में मनाया जाने वाला रक्षाबंधन इस भावना को और गहरा, और अधिक अर्थपूर्ण बना देता है। राखी का धागा केवल भाई—बहन के रिश्ते की रक्षा का प्रतीक नहीं है, बल्कि यह उस संपूर्ण सामाजिक ताने—बाने की रक्षा का प्रतीक है जो हमें एक—दूसरे से जोड़े रखता है। जिस तरह एक बहन अपने भाई की भलाई और लंबी आयु की कामना करती है, उसी तरह हमारा पूरा समुदाय एक—दूसरे के खेत, फसल, परिवार और भविष्य की भलाई की



कामना करता है और उसके लिए बिना संकोच हाथ बँटाता है।

कई गाँवों में यह मार्मिक परंपरा भी प्रचलित है कि महिलाएँ धरती माता को भी प्रतीकात्मक रूप से राखी बाँधती हैं — यह स्मरण कराते हुए कि जिस तरह हम अपनों की रक्षा करने का वचन देते हैं, उसी तरह हमें मिट्टी, जल, बीज, जानवर, पर्यावरण और जंगल की भी रक्षा करनी है। यह सुंदर भावना हमें सिखाती है कि प्रकृति की देखभाल और समाज की देखभाल, दोनों वास्तव में एक ही कर्तव्य के दो रूप हैं—एक ही डोर के दो सिरें।

बदलते समय की चुनौतियाँ और सामूहिकता की जरूरत — बदलते समय के साथ पलायन, अकेले परिवारों में बिखराव, और परंपरागत सामूहिकता में क्रमिक कमी जैसी गंभीर चुनौतियाँ भी हमारे सामने खड़ी हैं। कई युवा रोजगार की तलाश में शहरों की ओर पलायन कर रहे हैं, जिससे खेती का पूरा भार गाँव में रुकी महिलाओं और बुजुर्ग के कंधों पर आ जाता है। ऐसे समय में, साझी मेहनत की परंपरा को सहेजना, सम्मान देना और और

अपनी थाली, अपना स्वास्थ्य : स्थानीय भोजन, मौसमी देखभाल और परंपरागत ज्ञान की ओर एक सार्थक पहल

बच्चों के विकास के लिए अधिक लाभकारी होता है।

महिलाओं का स्वास्थ्य — पूरे परिवार की जिम्मेदारी परिवार की देखभाल करने वाली महिला स्वयं स्वस्थ होगी, तभी परिवार स्वस्थ रहेगा। लेकिन अक्सर महिलाएँ सबसे अंत में भोजन करती हैं और अपने हिस्से का पौष्टिक भोजन भी दूसरों को दे देती हैं।

इससे खून की कमी, कमजोरी और गर्भावस्था के दौरान स्वास्थ्य संबंधी समस्याएँ बढ़ सकती हैं।

गर्भवती और स्तनपान कराने वाली महिलाओं को पर्याप्त भोजन, हरी सब्जियाँ, दालें, मोटे अनाज, मौसमी फल, पर्याप्त पानी, नियमित स्वास्थ्य जाँच तथा आयरन और कैल्शियम की गोलियाँ स्वास्थ्य कार्यकर्ता की सलाह के अनुसार अवश्य लेनी चाहिए।

श्रम और सही जानकारी — श्रम: महँगा भोजन ही पौष्टिक होता है। सही जानकारीरू स्थानीय अनाज, दालें, हरी सब्जियाँ और मौसमी फल कम लागत में भी भरपूर पोषण देते हैं।

❖ श्रम: बच्चे का पेट भर गया, मतलब उसे पूरा पोषण मिल गया।

❖ सही जानकारी : बच्चे के भोजन में विविधता और पोषक तत्वों का होना भी उतना ही आवश्यक है।

❖ श्रम : घरेलू उपचार हर बीमारी का इलाज हैं। सही जानकारी : सामान्य परेशानी में घरेलू उपाय सहायक हो सकते हैं, लेकिन गंभीर लक्षण होने पर तुरंत स्वास्थ्य केन्द्र जाना चाहिए।

मौसम के अनुसार बदलें अपनी थाली — प्रकृति हर मौसम में हमें ऐसे खाद्य पदार्थ देती है जो उस समय शरीर की आवश्यकता के अनुरूप होते हैं। यदि हम मौसम के अनुसार भोजन और दिनचर्या अपनाएँ, तो अनेक बीमारियों से बचा जा सकता है।

परंपरागत ज्ञान—हमारी धरोहर — हमारे गाँवों में पीढ़ियों से स्वास्थ्य से जुड़ा समृद्ध पारंपरिक ज्ञान मौजूद है।

तुलसी, हल्दी, अदरक, नीम, अजवाइन और गिलोय जैसी औषधीय वनस्पतियों का उपयोग सामान्य स्वास्थ्य समस्याओं में किया जाता है। इनका सही और सीमित उपयोग लाभदायक हो सकता है।

लेकिन यदि तेज बुखार, साँस लेने में कठिनाई, लगातार दस्त या उल्टी, गर्भवती महिला को रक्तस्राव, बच्चा लगातार सुस्त रहे या कोई गंभीर स्वास्थ्य समस्या दिखाई दे, तो केवल घरेलू उपचार पर निर्भर न रहें। ऐसी स्थिति में तुरंत स्वास्थ्य केन्द्र या चिकित्सक से संपर्क करें।

स्वच्छता और पोषण—दोनों साथ—साथ — अच्छा भोजन तभी पूरा लाभ देता है, जब स्वच्छता का भी ध्यान रखा जाए। भोजन बनाने और खाने से पहले हाथ धोना, शौच के बाद साबुन से हाथ धोना, सुरक्षित पानी पीना, भोजन को ढककर रखना और घर—आँगन को साफ रखना अनेक बीमारियों से बचाने में मदद करता है।

इस महीने का संकल्प — सप्ताह में कम से कम

अधिक मजबूत करना पहले से कहीं ज्यादा जरूरी हो गया है।

हमें अपनी नई पीढ़ी को यह स्पष्ट रूप से समझाना होगा कि सामूहिकता कोई पुरानी, अप्रासंगिक बात नहीं है, बल्कि यह अकेलेपन, गरीबी और असुरक्षा जैसी चुनौतियों से लड़ने का सबसे कारगर और भरोसेमंद हथियार है। जब महिलाएँ संगठित होकर, एकजुट होकर काम करती हैं, तो वे न केवल बेहतर और अधिक फसल उगाती हैं, बल्कि अपने अधिकारों, अपनी जरूरतों और अपने सम्मान के लिए एक साझा आवाज भी बुलंद कर पाती हैं। यही सामूहिक शक्ति असली सामाजिक बदलाव की जननी है।

समुदाय से अपील — इस अगस्त, जब आप राखी का पवित्र धागा बाँधें, तो एक क्षण रुककर यह भी सोचें — क्या हम अपने पड़ोसी के खेत में मदद के लिए स्वेच्छा से हाथ बढ़ा सकते हैं? क्या हम अपनी सामूहिक कृषि परंपरा को अपने बच्चों और नाती—पोतों तक ईमानदारी से पहुँचा रहे हैं? क्या हमारी बेटीयाँ,

बहुएँ और युवा महिलाएँ इस साझेपन की भावना को आगे ले जाने के लिए पर्याप्त रूप से प्रोत्साहित और सशक्त की जा रही हैं?

आइए, इस खरीफ मौसम में हम सब मिलकर यह सार्थक संकल्प लें—

❖ हर महिला किसान के अथक परिश्रम को सम्मान दें, चाहे वह घर का हो या खेत का काम।

❖ साझी मेहनत और सामूहिक खेती की गौरवशाली परंपरा को नई पीढ़ी तक सजगता से पहुँचाएँ।

❖ पारंपरिक बीज, अनुभव और कृषि—ज्ञान का निरंतर आदान—प्रदान करते रहें।

❖ रक्षाबंधन के इस पावन अवसर पर धरती, जल, मिट्टी और प्रकृति की रक्षा का भी दृढ़ संकल्प लें।

❖ गाँव की हर महिला को यह गहरा अहसास दिलाएँ कि वह अकेली नहीं है, पूरा समुदाय उसके साथ खड़ा है।

❖ युवाओं को सामूहिक कृषि कार्यों में सक्रिय भागीदार बनाएँ, ताकि यह परंपरा आगे भी जीवित रहे।

‘साझे हाथ, साझी फसल’ महज एक आकर्षक वाक्य नहीं है, बल्कि यह हमारी जड़ों से जुड़ी एक संपूर्ण जीवन—पद्धति है, एक जीवंत संस्कृति है जो पीढ़ी—दर—पीढ़ी हमें एक—दूसरे से बांधे रखती है। जब हाथ साझे होते हैं, तो केवल फसल ही नहीं, बल्कि खुशियाँ, हिम्मत, भरोसा और सुरक्षा की भावना भी स्वाभाविक रूप से साझी हो जाती है। यही वह अदृश्य धागा है जो हमारे समुदाय को हर मुश्किल दौर में एकजुट और मजबूत बनाए रखता है।

आइए, इस इस अमूल्य भावना को और गहरा करें, इसे नई ऊर्जा दें, और अपने पूरे समुदाय को और अधिक सशक्त, संगठित और समृद्ध बनाएँ। क्योंकि जब हाथ साझे होते हैं, तभी फसल सचमुच साझी बनती है—और यही साझापन हमारी सबसे बड़ी ताकत है।

तीन दिन मोटे अनाज को भोजन में शामिल करेंगे।

❖रोजाना एक हरी पत्तेदार सब्जी खाने का प्रयास करेंगे।

❖बच्चों और गर्भवती महिलाओं को पौष्टिक भोजन में प्राथमिकता देंगे।

❖घर में मौसमी फल और स्थानीय खाद्य पदार्थों का उपयोग बढ़ाएँगे।

❖बीमारी होने पर समय पर स्वास्थ्य केन्द्र से सलाह लेंगे।

आइए, मिलकर स्वस्थ परिवार और स्वस्थ गाँव बनाएँ

हमारी मिट्टी, हमारे बीज, हमारे खेत और हमारी परंपराएँ केवल हमारी पहचान नहीं, बल्कि हमारे स्वास्थ्य की सबसे बड़ी ताकत हैं। यदि हम स्थानीय भोजन को अपनाएँ, बच्चों और महिलाओं को पोषण को प्राथमिकता दें, मौसम के अनुसार अपनी जीवनशैली में बदलाव करें और आवश्यकता पड़ने पर समय पर स्वास्थ्य सेवाओं का लाभ लें, तो हम कुपोषण और अनेक बीमारियों से बचाव कर सकते हैं।

स्वस्थ परिवार की शुरुआत हमारी अपनी थाली से होती है। आइए, अपनी स्थानीय खाद्य परंपराओं को अपनाकर आने वाली पीढ़ियों के लिए एक स्वस्थ, सशक्त और खुशहाल समाज का निर्माण करें।



सामाजिक मुद्दा (पलायन/बाल विवाह/बाल मजदूरी)

वो पगडंडी, जो घर लौटती है, पलायन, जलवायु संकट और बाल स्वराज की राह

01 पृष्ठभूमि— आदिवासी जीवन—पद्धति—संबंधों की जड़ें ही हमारे गाँवों की सबसे बड़ी ताकत हैं। आदिवासी त्रिसंगम क्षेत्र राजस्थान—मध्यप्रदेश—गुजरात में जल, जंगल और जमीन के साथ समुदाय का रिश्ता सदियों पुराना है। हमारी संस्कृति में बच्चे को कभी अकेला नहीं माना गया। बच्चा केवल माँ—बाप की संतान नहीं, बल्कि पूरे समुदाय की साझी जिम्मेदारी और आने वाले कल का वाहक होता है। बच्चा जो कुछ सीखता है—व्यवहार, संस्कार, जीवन—कौशल—वह पूरे गाँव में समुदाय के बीच सीखता है।

जलवायु एवं कृषि संकट ने बीते कुछ दशकों में हालात बदल दिए हैं। मौसम अब पहले जैसा भरोसेमंद नहीं रहा। साल के कुछ ही महीने खेती से गुजारा चलता है। जल संरक्षण, जलवायु के अनुसार खेती करने का पुराना ज्ञान—जो हमारे बुजुर्गों के पास था—धीरे—धीरे भुलाया जा रहा है। तालाब, कुण्ड, मेड़बंदी और मिश्रित खेती जैसी पारंपरिक तकनीकें कमजोर पड़ती जा रही हैं। खेती से इतर कोई स्थायी स्थानीय रोजगार भी सीमित है। यही आर्थिक असुरक्षा परिवार को धीरे—धीरे पलायन की ओर धकेलती है।

02 पलायन की स्थिति में— पलायन को मजबूर एक किसान परिवार जब पलायन करता है, तो वह केवल जगह ही नहीं बल्कि अपने साथ अपनी भाषा, अपनी मातृभाषा, अपने लोकगीत, अपनी कहानियाँ, अपने पारंपरिक खेल, अपनी कला, आदिवासी संस्कृति, परंपराओं का संग्रह, और अपना पारंपरिक ज्ञान भी पीछे अपने गाँव में ही छोड़ जाता है। बच्चे भी परिवार के साथ पलायन पर जाते हैं—लेकिन एक नई और अनजान दुनिया में। अगर इसे गहराई से समझें तो यह एक चक्रीय संकट है अर्थात पलायन का यह असर कोई एक बार की घटना नहीं, बल्कि एक स्व—पोषित चक्र है, जहाँ हर कड़ी अगली कड़ी को जन्म देती है।

03. बच्चों की शिक्षा, समग्र विकास और सांस्कृतिक पहचान पर प्रभाव — आइये मिलकर समझते हैं कि पलायन के दौरान बच्चे शिक्षा से कैसे वंचित होते हैं यह वंचना एक ही झटके में नहीं होती, बल्कि कई छोटी—छोटी बाधाओं के जुड़ने से होती है —

3.1. दाखिले की समस्या— पलायन स्थल (शहर या दूसरे राज्य) में बच्चे को नए स्कूल में दाखिला दिलाना आसान नहीं होता—स्थायी पते का न होना, जरूरी कागजात की कमी, और दाखिले की जटिल प्रक्रिया माता—पिता के लिए बड़ी बाधा बन जाती है।

3.2. भाषा की दीवार— पलायन स्थल पर पढ़ाई की भाषा अक्सर बच्चे की मातृभाषा से अलग होती है। कक्षा में पढ़ाया जा रहा विषय समझ ही नहीं आता, जिससे बच्चा जल्दी पीछे छूटने लगता है और स्कूल जाने में उसकी रुचि खत्म हो जाती है।

3.3. मौसमी आना— जाना और टूटती निरंतरता— पलायन साल—दर—साल दोहराया जाता है —कुछ महीने गाँव में, कुछ महीने बाहर। इस बार—बार के आवागमन में न तो गाँव के स्कूल में नियमित उपस्थिति बन पाती है, न पलायन स्थल पर। पढ़ाई की यह टूटी—फूटी कड़ी धीरे—धीरे स्थायी दूरी में बदल जाती है।

3.4. सामाजिक अलगाव और न अपनाया जाना— जिस नए माहौल में बच्चा पहुँचता है, वहाँ अक्सर उसे “बाहरी” या “आदिवासी बच्चा” कहकर अलग तरह से देखा जाता है—कभी अपनाया ही नहीं जाता। यह भावनात्मक दूरी भी स्कूल जाने की प्रेरणा को कमजोर करती है।

3.5. रहने और सुरक्षा की अनिश्चितता— पलायन स्थल पर अक्सर अस्थायी झोपड़ियों या निर्माण स्थलों के पास रहना पड़ता है, जहाँ न सुरक्षित माहौल होता है, न स्कूल जाने लायक साधन होते हैं।

ये सभी कारण मिलकर बच्चे को धीरे—धीरे स्कूल से दूर करते जाते हैं—पहले अनियमित उपस्थिति, फिर पढ़ाई में पिछड़ना, और अंततः स्थायी ड्रॉप—आउट। और यहीं से बाल मजदूरी और बाल विवाह का खतरा बढ़ जाता है।

04. स्कूल से बाहर होने के बाद बच्चा बाल श्रम में कैसे धकेला जाता है

4.1. खाली समय का ‘उपयोगी’ बन जाना— जिस दिन से बच्चा स्कूल जाना बंद करता है, उसके पास पूरे दिन का समय खाली होता है। परिवार के लिए यह समय काम में लगाया जाने वाला संसाधन बन जाता है।

4.2. परिवार की आर्थिक जरूरत सीधे बच्चे पर आ जाना— पलायन की मूल वजह ही आर्थिक तंगी है। जब पूरा परिवार मजदूरी की तलाश में निकलता है, तो हर सदस्य से कमाई की उम्मीद बढ़ जाती है। स्कूल से बाहर हो चुका बच्चा परिवार की आय का एक जरूरी हिस्सा माना जाने लगता है।

4.3. असंगठित क्षेत्र में आसान प्रवेश— निर्माण स्थल, ईंट—भट्ठा, खेत मजदूरी, छोटे कारखाने— इन असंगठित क्षेत्रों में काम पाने के लिए न उम्र का प्रमाण माँगा जाता है, न कोई औपचारिक जाँच होती है। ठेकेदार अक्सर पूरे परिवार को एक इकाई मानकर काम पर रखते हैं, जिसमें बच्चे भी शामिल हो जाते हैं।

4.4. कम मजदूरी पर काम— फिर भी ‘फायदे’ जैसा दिखना— बच्चों को वयस्कों से कम मजदूरी दी जाती है, इसलिए ठेकेदारों को भी बच्चों को काम पर रखना सस्ता पड़ता है।



4.5. कानूनी निगरानी से बाहर होना— पलायन स्थल पर बच्चा न तो स्थानीय स्कूल के रिकॉर्ड में होता है, न किसी स्थायी पते से जुड़ा होता है। इससे बाल श्रम रोकथाम तंत्र की पहुँच से वह लगभग पूरी तरह बाहर हो जाता है।

4.6. ‘कमाने वाला सदस्य’ बनने के बाद वापसी मुश्किल होना— एक बार बच्चा नियमित रूप से कमाना शुरू कर दे, तो परिवार के लिए उसकी कमाई एक जरूरत बन जाती है। अब उसे वापस स्कूल भेजना सीधे परिवार की आय को प्रभावित करता है।

05 शिक्षा से वंचित बाल विवाह की ओर कैसे धकेले जाते हैं

5.1. स्कूल—एक सुरक्षा कवच जो हट जाता है— जब तक बेटी स्कूल में है, समाज और परिवार दोनों उसे ‘पढ़ने वाली बच्ची’ के रूप में देखते हैं—शादी की बात टलती रहती है। स्कूल छूटते ही परिवार पर विवाह के बारे में सोचने का सामाजिक दबाव खुलकर सामने आने लगता है।

5.2. ‘सुरक्षा’ के नाम पर जल्दबाजी— पलायन के दौरान अनजान और अनिश्चित माहौल में परिवार को किशोरी की सुरक्षा की चिंता सताती है। ऐसे हालात में शादी को ही सबसे “भरोसेमंद सुरक्षा” के रूप में देखा जाने लगता है।

5.3. आर्थिक बोझ हल्का करने की सोच— स्कूल से बाहर

बेटी परिवार के लिए अतिरिक्त खर्च और जिम्मेदारी बन जाती है। शादी कर देने को परिवार अक्सर एक “जिम्मेदारी हल्की करने” के तरीके के रूप में देखता है।

5.4. सामाजिक दबाव और तुलना— अनजान माहौल में रह रहे परिवार अक्सर अपने समुदाय के दूसरे परिवारों को देखकर फैंसला लेते हैं—“फलां की बेटी की भी शादी हो गई, हमारी भी करनी है।”

5.5. सूचना और जागरूकता की कमी— पलायन स्थल पर परिवार अक्सर बाल विवाह कानून, इसके स्वास्थ्य और शिक्षा पर पड़ने वाले असर, या शिकायत करने के तरीकों से पूरी तरह अनजान होते हैं।

5.6. निगरानी तंत्र का पूरी तरह गायब हो जाना— स्थायी पते और स्कूल रिकॉर्ड से बाहर होने के कारण न SMC को पता चलता है, न बाल संरक्षण समिति को। शादी अक्सर बिना किसी रोक—टोक के कर दी जाती है।

5.7. एक बार शादी होने पर वापसी असंभव— शादी के बाद बेटी की पढ़ाई या भविष्य के बारे में सोचने का दरवाजा लगभग पूरी तरह बंद हो जाता है। घरेलू जिम्मेदारी, कम उम्र में गर्भावस्था और नए परिवार की अपेक्षाएँ उसे स्थायी रूप से शिक्षा और अवसरों से दूर कर देती हैं।

06 पलायन का बच्चे की सांस्कृतिक पहचान पर प्रभाव कैसे पड़ता है।

6.1. मातृभाषा का धीरे— धीरे छूटना—नए माहौल में बोलचाल, स्कूल और आसपास का माहौल—सब कुछ एक अलग भाषा में होता है। बच्चा धीरे—धीरे अपनी मातृभाषा में बोलना कम कर देता है। भाषा छूटने का मतलब सिर्फ शब्द छूटना नहीं—उसमें बंधी कहावतें, गीत, कहानियाँ और सोचने का तरीका भी साथ में छूटता जाता है।

6.2. लोकगीत, कहानियाँ और मौखिक परंपरा से कटाव— आदिवासी संस्कृति में ज्ञान और इतिहास मुख्यतः मौखिक परंपरा से—दादी—नानी की कहानियों, त्योहारों के गीतों, बुजुर्गों की बातचीत से—अगली पीढ़ी तक पहुँचता है। पलायन के दौरान बच्चा बुजुर्गों और गाँव के माहौल से दूर हो जाता है।

6.3. उत्सवों और सामूहिक आयोजनों में भागीदारी का न होना— गाँव के त्योहार, ग्राम सभा, सामूहिक श्रम के मौके—ये सब वही जगह हैं जहाँ बच्चा व्यावहारिक रूप से अपनी संस्कृति को जीता और सीखता है। पलायन के कारण बच्चा इन मौकों से बार—बार गायब रहता है।

6.4. पहचान को लेकर शर्म और असुरक्षा— नए शहरी माहौल में आदिवासी पहचान को अक्सर हीन दृष्टि से देखे जाने की संभावना रहती है—“आदिवासी” कहकर अलग किया जाना, मजाक उड़ाया जाना।

6.5. दो दुनियाओं के बीच उलझन— बच्चा एक तरफ घर पर सुनी जाने वाली भाषा और परंपराओं में और दूसरी तरफ बाहर के माहौल में जीता है। यह दोहरापन कई बार भ्रम और असुरक्षा पैदा करता है।

6.6. पारंपरिक पर्यावरणीय और कृषि ज्ञान से वंचित होना— जल संरक्षण, मौसम पहचानना, देसी बीज, जंगल से जुड़ा ज्ञान—यह सब बच्चा गाँव में रहते हुए रोजमर्रा के अनुभव से सीखता है। पलायन के दौरान यह सब सीखना रुक जाता है।

07. पलायन के दौरान समुदाय, परिवार और सरकार की भूमिका

इस तरह अगर खेती अपनी परंपरागत सामूहिकता और स्थानीय ज्ञान के सहारे फिर मजबूत हो, तो पलायन की मजबूरी घटेगी—और इसी के साथ बच्चों की शिक्षा, सुरक्षा और

सांस्कृतिक जड़ें भी सुरक्षित रहेंगी। अगर फिर भी पलायन को पूरी तरह से रोकें जाने में कमी रह जाती है ऐसे में परिवार, समुदाय और सरकार की भूमिका को बाल मजदूरी और बाल विवाह से बचाव के लिए भी सुनिश्चित किया जाना आवश्यक है ताकि बच्चे सच्चा बचपन के तहत अपने बाल अधिकारों का आनंद उठा सकें।

7.1 परिवार की भूमिका — अ) बच्चे की शिक्षा को कमाई या शादी का विकल्प न मानना—पलायन के दौरान भी पढ़ाई जारी रखने के तरीके तलाशना।

ब) बेटे—बेटी दोनों की शिक्षा को समान महत्व देना, विशेषकर किशोरियों की पढ़ाई को आर्थिक तंगी या “सुरक्षा” की सोच के आधार पर बीच में न छुड़वाना।

स) बच्चे की उम्र और सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए काम में शामिल करने से बचना।

द) बाल विवाह और बाल मजदूरी के दीर्घकालिक नुकसान को समझना और जल्दबाजी में फैसला न लेना।

य) मुश्किल हालात में परिवार का अकेले फैसला न लेना—सक्षम समूह, ग्राम स्वराज समूह या SMC से खुलकर सलाह लेना।

7.2 समुदाय की भूमिका — अ) ग्राम स्वराज समूह—गाँव में हर परिवार पर निगरानी रखे। पलायन से पहले ही यह पता लगाए कि किसी बच्चे की पढ़ाई छूटने या जल्दी शादी होने का खतरा तो नहीं।

ब) सक्षम समूह (महिला किसान संगठन) — आर्थिक रूप से कमजोर परिवारों के साथ मिलकर कृषि आधारित परम्पराओं को पुनर्जीवित करने में सहयोग करें।

स) SMC सदस्य—स्कूल छोड़ने वाले हर बच्चे का रिकॉर्ड रखें और परिवार से सीधे संवाद कर पढ़ाई फिर शुरू कराने की कोशिश करें।

द) बाल स्वराज समूह—किसी दोस्त के स्कूल छूटने या शादी की बात चलने पर बड़ों तक बात पहुँचाएँ।

य) सामूहिक निगरानी तंत्र— जैसे ही किसी परिवार में बाल विवाह की तैयारी या बच्चे को काम पर भेजने की बात दिखे, समूह मिलकर परिवार से समय रहते बातचीत करे।

7.3 सरकार की भूमिका— अ) बाल विवाह और बाल मजदूरी रोकथाम कानूनों का गाँव और पलायन स्थल—दोनों जगह सक्रिय क्रियान्वय सुनिश्चित करें।

ब) सुलभ और भरोसेमंद हेल्पलाइन तंत्र की जानकारी हर परिवार तक पहुँचाए।

स) पलायन करने वाले परिवारों के बच्चों के लिए सीजनल हॉस्टल या मौसमी आवासीय शिक्षा केंद्र उपलब्ध कराए।

द) असंगठित क्षेत्र (निर्माण स्थल, ईंट—भट्ठा) में बाल श्रम की नियमित जाँच और सख्त निगरानी करे।

य) ग्राम स्वराज समूह, सक्षम समूह और SMC को बाल संरक्षण की निगरानी में औपचारिक भूमिका देना।

र) बाल विवाह और बाल मजदूरी के नुकसान पर जागरूकता अभियान चलाए।

यह लेख चर्चा की शुरुआत है, अंत नहीं। — अपने गाँव, अपने अनुभव और अपनी समझ के साथ इस बातचीत को आगे बढ़ाएँ और चर्चा करते रहें।



पारिस्थितिकी वृक्ष : पुनर्नवा : प्रकृति की संजीवनी और दक्षिणी राजस्थान की आदिवासी विरासत

“जंगल केवल लकड़ी का भंडार नहीं, बल्कि जीवन, स्वास्थ्य और संस्कृति का आधार हैं। पुनर्नवा इसका जीवंत उदाहरण है।”

दक्षिणी राजस्थान के बांसवाड़ा और डूंगरपुर जिले अपनी समृद्ध जेब विविधता, घने वन क्षेत्रों और आदिवासी संस्कृति के लिए प्रसिद्ध हैं। यहाँ का आदिवासी समुदाय सदियों से जंगलों में उपलब्ध औषधीय पौधों का उपयोग अपने स्वास्थ्य, भोजन और पशु चिकित्सा में करते आए हैं। इन्हीं अमूल्य वनोपधियों में एक है पुनर्नवा, जिसे आयुर्वेद में “नव जीवन देने वाली औषधि” कहा गया है।

यह केवल एक जड़ी—बूटी नहीं, बल्कि प्रकृति और आदिवासी जीवन के बीच गहरे संबंध का प्रतीक है। वर्षा ऋतु में सूखी धरती से पुनः हरी होकर निकलने वाली यह वनस्पति हमें सिखाती है कि प्रकृति हर वर्ष नया जीवन लेकर आती है।

पुनर्नवा का परिचय —

वानस्पतिक नाम : Boerhavia diffusa Linn-

यह एक बारहमासी, भूमि पर फैलने वाली शाकीय वनस्पति है, जो वर्षा ऋतु में खेतों, बाड़ियों, जंगलों और खुले स्थानों पर स्वतः उग आती है। इसकी पत्तियाँ कोमल, गोल अथवा अंडाकार होती हैं तथा जड़ मोटी, मांसल और औषधीय गुणों से भरपूर होती है।

पुनर्नवा की पहचान — भारत के विभिन्न क्षेत्रों में कई पौधों को स्थानीय रूप से पुनर्नवा कहा जाता है, जिससे भ्रम की स्थिति बन जाती है।

दक्षिणी राजस्थान में स्थानीय नाम — बांसवाड़ा, डूंगरपुर तथा आसपास के आदिवासी क्षेत्रों में पुनर्नवा के लिए एक ही नाम सर्वत्र प्रचलित नहीं है। गाँव, बोली और समुदाय के अनुसार इसके अलग—अलग स्थानीय नाम मिलते हैं। कई स्थानों पर इसे ‘साटोड़ी’, ‘पुनरवा’, ‘लाल पुनरवा’ अथवा **स्थानीय भीली बोली के नामों से जाना जाता है।** अलग—अलग गाँवों में नाम बदल सकते हैं, इसलिए पौधे की पहचान अनुभवी



स्थानीय वैद्य या वनस्पति विशेषज्ञ से करना उचित माना जाता है।

लोक मान्यताएँ — आदिवासी समाज में पुनर्नवा केवल औषधि नहीं, बल्कि प्रकृति के पुनर्जन्म का प्रतीक मानी जाती है।

● वर्षा की पहली अच्छी बारिश के बाद इसका उगना समृद्धि और अच्छी खेती का संकेत माना जाता है।

● बुजुर्गों का विश्वास है कि वर्षा ऋतु की कोमल पुनर्नवा शरीर की गर्मी कम करती है और वर्षभर स्वास्थ्य बनाए रखने में सहायक होती है।

● कई परिवार वर्षा ऋतु के प्रारंभ में इसकी पहली सब्जी बनाकर परिवार के साथ खाते हैं, जिसे स्वास्थ्यवर्धक माना जाता है।

● पारंपरिक वैद्य मानते हैं कि जंगल से औषधीय पौधे आवश्यकता भर ही लेने चाहिए, ताकि प्रकृति का संतुलन बना रहे।

आदिवासी जीवन शैली से जुड़ाव — दक्षिणी राजस्थान का आदिवासी समाज जंगल की **जीवित भंडार** मानता है। यहाँ भोजन और औषधि का बड़ा हिस्सा वनस्पतियों से प्राप्त होता है।

पुनर्नवा की कोमल पत्तियाँ वर्षा ऋतु में साग के रूप में खाई जाती हैं। इसे मक्का की रोटी, बाजरे की रोटी अथवा ज्वार की रोटी के साथ खाने की परंपरा कई गाँवों में आज भी जीवित है।

स्थानीय वैद्य इसकी जड़ों और पत्तियों का उपयोग शरीर की सूजन, मूत्र संबंधी

समस्याओं तथा सामान्य कमजोरी में सहायक औषधि के रूप में करते रहे हैं। यह ज्ञान पीढ़ी—दर—पीढ़ी मौखिक परंपरा से सुरक्षित रखा गया है।

आयुर्वेदिक गुण — आयुर्वेद के अनुसार पुनर्नवा — उष्णवीर्य, तिक्त (कड़वी), रुक्ष, कफ—वात शामक, श्रेष्ठ रसायन मानी जाती है।



प्रमुख औषधीय उपयोग—

पुनर्नवा का उपयोग परंपरागत रूप से निम्न स्थितियों में किया जाता है—

- शरीर की सूजन
- किडनी एवं मूत्र संबंधी समस्याएँ
- लीवर विकार
- पाण्डुरोग (एनीमिया)
- पाचन संबंधी समस्याएँ
- शरीर में अतिरिक्त जल का जमाव
- सामान्य कमजोरी

प्रमुख रासायनिक घटक — पुनर्नवा में पुनर्नवीन (Punarnavine) नामक एल्कलॉइड, बीटा—साइटोस्टेरॉल, विभिन्न कार्बनिक अम्ल तथा पोटेशियम, सल्फेट एवं क्लोराइड जैसे खनिज लवण पाए जाते हैं। यही हट्टे पुनर्वनरोधी, मूत्रवर्धक तथा यकृत—सुरक्षात्मक गुण प्रदान करते हैं।

पारंपरिक घरेलू उपयोग (केवल लोकज्ञान)— आदिवासी समाज में निम्न प्रकार के उपयोग प्रचलित रहे हैं—

- कोमल पत्तियों की सब्जी बनाकर सेवन।
- पत्तियों को अन्य वर्षाकालीन सागों के साथ मिलाकर पकाना।
- जड़ का काढ़ा पारंपरिक वैद्य की सलाह से उपयोग करना।
- सूखी जड़ का चूर्ण अन्य आयुर्वेदिक औषधियों के साथ सीमित मात्रा में प्रयोग करना।

“महत्वपूर्ण”— ये पारंपरिक लोक—प्रचलित उपयोग हैं। किसी भी रोग के उपचार के लिए बिना प्रशिक्षित आयुर्वेदाचार्य या चिकित्सक की सलाह के औषधीय सेवन नहीं करना चाहिए।

संरक्षण की आवश्यकता — आज रासायनिक कृषि, वनों की कटाई तथा प्राकृतिक आवासों के नष्ट होने से अनेक औषधीय वनस्पतियाँ कम होती जा रही हैं। यदि ग्राम स्वराज समूह, सक्षम समूह, ग्राम समुदाय, स्वयं सहायता समूह, युवा संगठन और विद्यालय मिलकर औषधीय पौधों का संरक्षण करें, तो यह आने वाली पीढ़ियों के लिए अमूल्य धरोहर सिद्ध होगा।

ग्राम स्तर पर औषधीय वनस्पति उद्यान, पोषण वाटिका तथा वनोपधि संरक्षण अभियान प्रारंभ किए जा सकते हैं, जिससे स्थानीय ज्ञान भी सुरक्षित रहेगा और लोगों को गुणवत्तापूर्ण औषधीय पौधे भी उपलब्ध होंगे।

निष्कर्ष — पुनर्नवा केवल एक औषधीय पौधा नहीं, बल्कि दक्षिणी राजस्थान की आदिवासी संस्कृति, लोकज्ञान और प्रकृति के साथ सामंजस्यपूर्ण जीवन का प्रतीक है। आधुनिक विज्ञान इसकी औषधीय क्षमता को स्वीकार कर रहा है, जबकि आदिवासी समाज सदियों से इसके गुणों का अनुभव करता आया है।

आज आवश्यकता है कि हम इस अमूल्य वनस्पति की पहचान करें, इसका संरक्षण करें, स्थानीय ज्ञान का सम्मान करें तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ इसका उपयोग बढ़ावा दें। यही हमारी सांस्कृतिक विरासत और प्राकृतिक संपदा की सच्ची रक्षा होगी।

“प्रकृति हमें हर वर्ष पुनर्नवा की तरह नया जीवन देती है। प्रश्न केवल इतना है कि क्या हम उसकी इस अनमोल देन को पहचान और संरक्षित कर पा रहे हैं?”



आजीविका/मूल्य श्रृंखला : साझे हाथ, साझी फसल : आजीविका /मूल्य श्रृंखला



अगस्त का महीना आते ही आदिवासी गाँवों में एक अलग ही चहल — पहल शुरू हो जाती है। एक तरफ खरीफ की फसलें, मक्का, ज्वार, उड़द—खेतों में हरियाली बिखेर रही होती हैं, तो दूसरी तरफ रक्षाबंधन का त्यौहार भाई — बहन के रिश्ते की डोर को और मजबूत कर रहा होता है। इन दोनों की छवियाँ अलग लग सकती हैं, लेकिन गहराई से देखें

तो दोनों में एक ही धागा बुना है। साझेदारी का धागा। यह साझेदारी सिर्फ भावनात्मक नहीं, बल्कि आजीविका और मूल्य श्रृंखला के हर पड़ाव पर भी उतनी ही मजबूती से दिखाई देती है।

महिला किसानों के लिए यह मौसम दोहरी जिम्मेदारी का समय होता है। सुबह घर का चूल्हा, बच्चों की देखभाल, और फिर खेत में निराई— गुड़ाई, बुवाई की देखरेख यह सब वे अकेले नहीं, बल्कि आपसी सहयोग से करती हैं। पड़ोस की महिलाएँ बारी— बारी से एक—दूसरे के खेत में हाथ बाँटती हैं, बीज और मेहनत दोनों साझा करती हैं। एक की फसल की चिंता सबकी चिंता बन जाती है, और यही सामूहिकता आदिवासी कृषि संस्कृति की जड़ है।

साझा श्रम: खेत की पहली कड़ी— पिछले पाँच दिन की



बातचीत में यह बात बार—बार सामने आई कि महिलाएँ इस साझा श्रम को केवल पारिवारिक जरूरत नहीं, बल्कि एक अनौपचारिक आर्थिक व्यवस्था मानती हैं। जब पाँच—छह महिलाएँ मिलकर एक के बाद एक खेत में काम करती हैं, तो मजदूरी पर होने वाला खर्च लगभग खत्म हो जाता है। इससे बचत सीधे परिवार की जेब में रहती है, जो मूल्य श्रृंखला की सबसे पहली और सबसे महत्वपूर्ण कड़ी है। उत्पादन लागत का कम होना।

इस श्रम—अदला—बदली की व्यवस्था को गाँव में अक्सर “हारी” या “सहयोग प्रथा” जैसे स्थानीय नामों से जाना जाता है। यह किसी औपचारिक अनुबंध पर नहीं, बल्कि आपसी भरोसे पर टिकी है—ठीक वैसे ही जैसे रक्षा सूत्र बिना किसी लिखित वादे के सुरक्षा का भरोसा देता है।

बीज से बाजार तक: साझी मूल्य श्रृंखला — सामूहिकता केवल श्रम तक सीमित नहीं रहती। यह मूल्य श्रृंखला के हर चरण में दिखाई देती है। बुवाई से पहले महिलाएँ अक्सर मिलकर स्थानीय देसी बीजों का आदान—प्रदान करती हैं, जिससे अच्छी गुणवत्ता और विविधता वाले बीज की पहचान आसान हो जाती है, और बाहरी या हाइब्रिड बीजों पर निर्भरता नहीं रहती। कई गाँवों में महिलाएँ अपने खुद के बीज भंडार भी साझा रूप से संभालती हैं, ताकि अगले मौसम में बाजार पर निर्भरता कम रहे।

फसल कटने के बाद की प्रक्रिया— सुखाना, छानना, भंडारण भी सामूहिक रूप से होती है, जिससे उपज की बर्बादी कम होती है और गुणवत्ता बेहतर बनी रहती है। जब उपज बेचने का समय आता है, तो अकेली महिला किसान की तुलना में समूह में बेचने पर मंडी में मोलभाव की ताकत कहीं ज्यादा होती है। व्यापारी बड़ी मात्रा में खरीद के लिए बेहतर दाम देने को तैयार रहते हैं, और इस तरह मूल्य श्रृंखला की अंतिम कड़ी कृ उचित मूल्य भी सामूहिकता से मजबूत होती है।

बचत समूह—सुरक्षा का दूसरा धागा— वागधारा से जुड़े कई गाँवों में महिला किसान समूहों (Saksham SamooH) के जरिए भी एक — दूसरे से जुड़ी हैं। खरीफ के मौसम में जब खाद या मजदूरी के लिए तुरंत पैसों की जरूरत पड़ती है, तो यही समूह छोटी बचत राशि से आपातकालीन ऋण उपलब्ध करा देते हैं। बिना साहूकार के ऊँचे ब्याज के जाल में फँसे। बीज की जरूरत यहाँ अलग और खास तरीके से पूरी होती हैरू वागधारा बाहरी या हाइब्रिड बीजों को बढ़ावा नहीं देता, बल्कि किसानों के बीच



साझे हाथ, साझी फसल

खेत केवल अनाज नहीं उगाते, वे रिश्ते भी उगाते हैं। मिट्टी केवल बीज नहीं सँभालती, वह विश्वास भी सँजोती है। जब कई हाथ मिलकर धरती को सींचते हैं, तब फसल केवल किसान की नहीं, पूरे समाज की होती है।

सावन का महीना जैसे ही वागड़ की धरती पर दस्तक देता है, प्रकृति का स्वरूप बदल जाता है। दक्षिणी पहाड़ियाँ हरी चादर ओढ़ लेती हैं। जंगलों में सागौन, महुआ, बाँस, खाखरा और पलाश की नई पत्तियाँ हवा के साथ झूमने लगती हैं। सूखी नालियाँ और छोटी नदियाँ फिर कल—कल बहने लगती हैं। खेतों की मेड़ों पर उगी घास संकेत देती है कि धरती ने नए जीवन को जन्म देने का संकल्प लिया है।

वागड़ के गाँवों में यह समय केवल वर्षा का नहीं, बल्कि आशा, विश्वास, मेहनत और सामूहिकता का मौसम होता है। खेतों में मक्का, ज्वार, बाजरा, तुआर, उड़द, मूंग, तिल, मूंगफली और स्थानीय पारंपरिक फसलों की हरियाली दूर तक दिखाई देती है। हर खेत में कोई न कोई परिवार मेहनत करता है, लेकिन यह मेहनत किसी एक व्यक्ति की नहीं होती। पुरुष, महिलाएँ, बुजुर्ग और युवा अपनी क्षमता के अनुसार साथ काम करते हैं।

सामूहिकता : वागड़ की सबसे बड़ी ताकत —

वागड़ की सबसे बड़ी ताकत सामूहिकता है। यह केवल खेती तक सीमित नहीं, बल्कि जीवन जीने का तरीका है। यहाँ खुशियाँ भी साझा हैं, चुनौतियाँ भी और मेहनत भी। इसी साझेपन ने आदिवासी समाज को कठिन परिस्थितियों में भी आत्मनिर्भर बनाए रखा है।

अगस्त का महीना रक्षाबंधन के कारण भी विशेष होता है। सामान्यतः इसे भाई—बहन के प्रेम और सुरक्षा के पर्व के रूप में देखा जाता है, लेकिन आदिवासी जीवन—दर्शन में सुरक्षा का भाव परिवार तक सीमित नहीं है। यह प्रकृति से भी जुड़ा है।

धरती हमारी माँ है, जंगल हमारे संरक्षक हैं, पानी जीवन का आधार है और बीज आने वाली पीढ़ियों की पूँजी हैं। जिस प्रकार बहन विश्वास का धागा बाँधती है, उसी प्रकार किसान वर्षा से पहले बीज धरती को सौंपता है और विश्वास करता है कि मिट्टी उसे निराश नहीं करेगी।

वागड़ की खेती : पूरे समाज की जिम्मेदारी —

वागड़ के अधिकांश आदिवासी गाँवों में खेती केवल आर्थिक गतिविधि नहीं, बल्कि सामाजिक जीवन का केन्द्र है। यदि किसी परिवार में काम करने वाले कम हों, किसी किसान की तबीयत खराब हो जाए, किसी विधवा महिला के खेत में निराई का समय हो या लगातार वर्षा के कारण काम जल्दी पूरा करना



हो, तो समुदाय स्वयं आगे आता है। कोई बुलावा नहीं, कोई मजदूरी तय नहीं — लोग अपने औजार लेकर पहुँच जाते हैं।

सुबह खेतों की ओर जाती महिलाओं के सिर पर टोकरी, हाथ में कुदाल और कंधे पर दराती दिखाई देती है। किसी खेत में महिलाएँ निराई करती हैं, पुरुष मेड़ मजबूत करते हैं, बुजुर्ग पौधों की स्थिति देखकर सलाह देते हैं और बच्चे घास इकट्ठा करते हैं। शाम तक पूरा खेत संवर जाता है। यह केवल खेती



नहीं, परिवार और समाज को जोड़ने वाली परंपरा है।

फल्या/पाड़ा — रिश्तों की जीवंत व्यवस्था —

वागड़ के आदिवासी गाँवों की विशेष पहचान फल्या/पाड़ा की संस्कृति है, जहाँ पड़ोसी परिवार से भी बढ़कर होता है। फल्या केवल कुछ घरों का समूह नहीं, बल्कि एक जीवंत सामाजिक व्यवस्था है। किसी घर में शादी हो, बीमारी हो, खेत में काम अधिक हो या बरसात में फसल बचाने की जरूरत हो, फल्या के लोग बिना बुलावे के साथ खड़े हो जाते हैं।

इसी संस्कृति ने सामूहिक मेहनत को जीवित रखा है। आज जब आधुनिक जीवन में व्यक्ति अकेला होता जा रहा है, वागड़ का फल्या याद दिलाता है कि विकास केवल संसाधनों से नहीं, बल्कि संबंधों से भी होता है।

महिला : साझेदारी की सबसे मजबूत कड़ी —

इस साझेदारी की आत्मा महिला किसान है। सुबह घर सँभालने से लेकर खेतों में काम करना, पशुधन की देखभाल, बीज सुरक्षित रखना, बच्चों का पोषण और परिवार की खाद सुरक्षा सुनिश्चित करना। ये सब उसकी दैनिक जिम्मेदारियों का हिस्सा हैं।

वह केवल मजदूर नहीं है। वह बीज की संरक्षक, मिट्टी की पहचान करने वाली अनुभवी किसान, पशुधन की देखभाल करने वाली संरक्षक और परिवार की पोषण प्रबंधक है। सबसे बढ़कर, वह सामुदायिक सहयोग की मजबूत आधारशिला है। जब गाँव की महिलाएँ एक साथ खेत में उतरती हैं, तो केवल निराई—गुड़ाई नहीं होती, बल्कि अनुभवों का आदान—प्रदान भी होता है। कौन—सा बीज अच्छा रहेगा, कहाँ पानी अधिक रुकेगा, मेड़ कहाँ मजबूत करनी है या किस पौधे में बीमारी के लक्षण हैं— ऐसा ज्ञान काम करते— करते साझा होता रहता है। यही अनौपचारिक ज्ञान पीढ़ी — दर — पीढ़ी आगे बढ़ता है।

यदि वागड़ की खेती से महिलाओं के हाथ अलग कर दिए जाएँ, तो खेतों की हरियाली आधी रह जाएगी।

साझे श्रम की जीवंत तस्वीर —

बारिश का मौसम निराई—गुड़ाई का होता है। अच्छी बारिश के साथ घास भी तेजी से बढ़ती है। ऐसे समय गाँव की महिलाएँ समूह बनाकर एक—दूसरे

स्थानीय व देसी बीजों का आपसी आदान—प्रदान करवाता है — पूरी तरह बिना पैसों के लेनदेन के। यह बीज—अदला— बदली भी उसी साझेदारी की भावना पर टिकी है, जो रक्षाबंधन के धागे में झलकती है — एक—दूसरे की जरूरत के समय साथ खड़े रहना, और पीढ़ियों से चली आ रही देसी बीज विरासत को सहेजना।

इन समूहों की नियमित बैठकों में महिलाएँ बाजार के भाव, फसल की मांग और नई तकनीकों की जानकारी भी आपस में साझा करती हैं। इस तरह अनौपचारिक जानकारी का यह आदान—प्रदान भी मूल्य श्रृंखला को मजबूत करने वाली एक अदृश्य लेकिन महत्वपूर्ण कड़ी बन जाता है।

जंगल की साझी संपदा— आदिवासी समुदायों के लिए आजीविका सिर्फ खेत तक सीमित नहीं है। जंगल भी उतना ही अहम हिस्सा है। बरसात के इसी मौसम में जंगल महुआ, तेंदू पत्ता, जंगली शहद, और तरह—तरह की वनोपज से भर उठता है। खेती के काम के साथ—साथ महिलाएँ समूह बनाकर जंगल से यह उपज इकट्ठा करती हैं। यह भी उसी सामूहिकता का विस्तार है जो खेत में दिखती है।

जंगल की उपज इकट्ठा करना अकेले का काम नहीं है। महिलाएँ समूह में जंगल जाती हैं, ताकि सुरक्षा भी बनी रहे और मेहनत भी बँट जाए। जो मिलता है, वह अक्सर सामूहिक रूप से बाँटा या बेचा जाता है, जिससे परिवार की आय में एक अतिरिक्त, महत्वपूर्ण कड़ी जुड़ जाती है—खासकर उन दिनों में जब खेत की फसल अभी तैयार नहीं होती।

यह वन—उपज भी उसी मूल्य श्रृंखला का हिस्सा बनती है जो खेत की उपज की होती है। संग्रहण, छँटाई, और फिर स्थानीय हाट या व्यापारी तक पहुँच। सामुदायिक वन अधिकार (Community Forest Right) के तहत जिन गाँवों को जंगल

की उपज पर सामूहिक अधिकार मिला है, वहाँ यह आय और भी सुरक्षित और सम्मानजनक बन जाती है। इस तरह खेत और जंगल—दोनों मिलकर आदिवासी परिवारों की आजीविका को एक संतुलन देते हैं, जो अकेले खेती से संभव नहीं।



सामूहिक ताकत, साझा भविष्य — यह सामूहिक भावना सिर्फ भावनात्मक नहीं, पूरी तरह व्यावहारिक भी है। जब महिलाएँ मिलकर काम करती हैं, तो श्रम की लागत घटती है, फसल समय पर तैयार होती है, और मूल्य श्रृंखला के हर पड़ाव। बीज खरीद से लेकर उपज बेचने तक—में उनकी सामूहिक ताकत साफ झलकती है। यही सामूहिकता उन्हें बाजार की अनिश्चितताओं के सामने अधिक मजबूती से खड़ा होने की क्षमता देती है, और धीरे—धीरे उन्हें आजीविका की एक स्थायी और आत्मनिर्भर व्यवस्था की ओर ले जाती है।

जिस तरह रक्षा सूत्र भाई—बहन के बीच सुरक्षा और स्नेह का वादा बाँधता है, उसी तरह खेत और बाजार में एक—दूसरे का

वादा बाँधता है, उसी तरह खेत और बाजार में एक—दूसरे का साथ देना भी एक अनकहा वादा है।**“तुम्हारी फसल की रक्षा, मेरी भी जिम्मेदारी है, और तुम्हारा मुनाफा, मेरी भी खुशी है।”**

इस रक्षाबंधन, वागधारा परिवार अपनी सभी महिला किसान बहनों के इसी साझे हाँसले को सलाम करता है—जो घर और खेत, जंगल और बाजार, सबको एक साथ, एक धागे में बाँधे रखती हैं।

के खेतों में काम करती हैंकृआज कमला के खेत में, कल सविता के खेत में और परसों कंकुबाई के खेत में।

न कोई हिसाब—किताब, न मजदूरी तय। बस एक विश्वास— “आज मैं तुम्हारे खेत में हूँ, कल तुम मेरे खेत में रहोगी।”

यह परंपरा आर्थिक लेन—देन से कहीं अधिक मजबूत सामाजिक पूँजी तैयार करती है। महिलाएँ खेतों में काम के साथ लोकगीत भी गाती हैं। इन गीतों में वर्षा की खुशी, धरती माता का आशीर्वाद, भाई—बहन का प्यार और अच्छी फसल की कामना होती है। यही गीत मेहनत को त्योहार में बदल देते हैं।

बदलते समय की नई जिम्मेदारियाँ —

जलवायु परिवर्तन ने खेती को अधिक अनिश्चित बना दिया है। कभी अत्यधिक बारिश, कभी लंबा सूखा और कभी नए कीट व रोगकृएसी परिस्थितियों में महिलाओं की भूमिका और महत्वपूर्ण हो गई है। वे कम पानी में चलने वाली स्थानीय फसलें अपनाने, जैविक खाद बनाने, पोषण बाड़ी विकसित करने, पशुपालन को खेती से जोड़ने और परिवार के भोजन में विविधता बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं।

इसलिए विकास की हर चर्चा में महिला किसान को केवल सहयोगी नहीं, बल्कि “निर्णयकर्ता” के रूप में स्वीकार करना आवश्यक है।

❖जब महिलाएँ निर्णय प्रक्रिया का हिस्सा बनती हैं...

❖जब परिवार मिलकर खेती करता है...

❖जब गाँव मिलकर जल और मिट्टी का संरक्षण करता है...

❖जब स्थानीय बीज और पारंपरिक ज्ञान का सम्मान होता है...

❖तभी खेती आत्मनिर्भर और भविष्य के लिए सुरक्षित बनती है।

हलमा : केवल श्रमदान नहीं, सामाजिक दर्शन

“हलमा” केवल किसी आयोजन का नाम नहीं है। यह जीवन जीने की ऐसी पद्धति है जिसमें पूरा समाज किसी एक परिवार या पूरे गाँव की आवश्यकता को अपनी जिम्मेदारी मान लेता है।

जब किसी खेत की मेड़ टूट जाए, जलस्रोत की सफाई करनी हो, किसी किसान का खेत समय पर तैयार न हो जाए या किसी विधवा, बुजुर्ग अथवा असहाय परिवार को खेती में मदद चाहिए हो, तब गाँव के लोग किसी बुलावे का इंतजार नहीं करते। वे अपने औजार लेकर स्वयं पहुँच जाते हैं।

यह काम मजदूरी के लिए नहीं, बल्कि विश्वास के निवेश के रूप में किया जाता है। यही भावना हलमा को केवल श्रमदान नहीं, बल्कि सामाजिक सुरक्षा की मजबूत व्यवस्था बनाती है।

इसलिए “साझे हाथ, साझी फसल” केवल खेती का संदेश नहीं देता, बल्कि ऐसे समाज की कल्पना प्रस्तुत करता है जहाँ श्रम, सम्मान, समानता और साझेदारी विकास की आधारशिला हों।

“साझे हाथों का भविष्य” — आज दुनिया जलवायु परिवर्तन, मिट्टी की गिरती उर्वरता, जल संकट और सामाजिक बिखराव



जैसी चुनौतियों से जूझ रही है। ऐसे समय में वागड़ की सामूहिक जीवन—शैली केवल एक क्षेत्र की परंपरा नहीं, बल्कि पूरी मानवता के लिए सीख बन सकती है।

समाधान शायद हमारे गाँवों की पगडंडियों पर ही मिलते हैं—

❖जहाँ महिलाएँ पारंपरिक बीज बचा रही हैं...

❖जहाँ बच्चे पेड़ लगा रहे हैं...

❖जहाँ किसान वर्षा की हर बूँद को रोकने और बचाने की कोशिश कर रहा है...

❖जहाँ पूरा फला किसी एक खेत को अपना खेत मानकर काम करता है...और जहाँ फसल पकने पर पहली खुशी किसी एक परिवार की नहीं, पूरे गाँव की होती है।



यही है “साझे हाथ, साझी फसल” का सच्चा अर्थ।

यह केवल खेती का सूत्र नहीं, सामाजिक न्याय का सूत्र है। यह प्रकृति के प्रति कृतज्ञता, साझेदारी और आत्मनिर्भरता का सूत्र है। यही वह रास्ता है, जो वागड़ की मिट्टी से निकलकर एक संवेदनशील, आत्मनिर्भर और प्रकृति के साथ संतुलित भविष्य की ओर ले जाता है।

“जब हाथ मिलते हैं, तब खेत हरे होते हैं। जब मन मिलते हैं, तब समाज समृद्ध होता है। और जब समाज प्रकृति के साथ चलता है, तब आने वाली पीढ़ियाँ सुरक्षित होती हैं।”

आइए, इस सावन और रक्षाबंधन पर केवल राखी का धागा ही नहीं, बल्कि “जल, जंगल, जमीन, बीज, बहनों के सम्मान और साझी खेती के संकल्प” को भी अपने जीवन से बाँधें।

“यही वागड़ की पहचान है, यही हमारी साझा विरासत है और यही आने वाले कल की सबसे बड़ी आशा है।”



